

**“एकल परिवार के बदलते स्वरूप का समाजशास्त्रीय अध्ययन”**

नेहा श्रीवास्तव एवं अजीत कुमार

<https://doi.org/10.61410/had.v21i3.345>**शोध—सार**

व्यक्ति के जीवन में परिवार की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। मनुष्य के जीवन की सबसे महत्वपूर्ण संस्था रही है। समाज के निर्माण में भी परिवार का योगदान निरन्तर प्रवाहमान रहा है। व्यक्ति के जन्म से लेकर जीवन-पर्यन्त सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक एवं भावात्मक विकास में परिवार की भूमिका महत्वपूर्ण होती है। परिवार मात्र पति-पत्नी और बच्चों का समूह ही नहीं बल्कि सामाजिक मूल्यों, सम्बन्धों, भूमिकाओं, उत्तरदायित्वों की एक व्यवस्थित संस्था रही है। परिवार के स्वरूप में होने वाले परिवर्तन व्यापक सामाजिक परिवर्तन का आइना होते हैं। परम्परागत भारतीय समाज में संयुक्त परिवार का अतुलनीय महत्व रहा है। किन्तु बदलते परिवेश में औद्योगीकरण, नगरीकरण आधुनिकीकरण, रोजगार के बदलते अवसर, शिक्षा की व्यापक भागीदारी, महिला सशक्तिकरण, आर्थिक आवश्यकता, व्यक्तिवादी सोच एवं सामाजिक गतिशीलता, परिवर्तित जीवन-शैली के कारण संयुक्त परिवार व्यवस्था का विघटन और एकल परिवार का विस्तार स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है।

**शब्द संकेत—** एकाकी परिवार, सामाजिक मूल्य, नाभिकीय परिवार, पारिवारिक स्वीकार्यता, संरचना, सम्बन्ध, प्रवास, कार्यशीलता, सहयोग, एकाकीपन।

**प्रस्तावना —**

एकाकी परिवारों का उद्भव औद्योगीकरण और उपभोक्तावादी संस्कृति एवं बाजारवाद के विस्तार से पनपे आधुनिक समाज ने ग्रामीण संयुक्त परिवार व्यवस्था को विघटित कर एकाकी परिवार का आविर्भाव होता है। जहाँ संयुक्त परिवार व्यवस्था में कई पीढ़ी के लोग एक साथ निवास और भोजन करते थे, वहीं एकाकी परिवार सामान्यतः पति-पत्नी तथा उसके अविवाहित बच्चे होते हैं। समाजशास्त्रीय दृष्टि से एकाकी परिवार का आकार छोटा होता है। इसमें पारिवारिक निर्णय में पति-पत्नी दोनों की भागीदारी होती है। पीटर मार्टक (1949) कहते हैं कि ‘परिवार को सामाजिक रूप से स्वीकृत यौन सम्बन्ध, आर्थिक सहयोग तथा प्रजनन से सम्बन्धित संस्था के रूप में देखा जा सकता है।’ उनके अनुसार परिवार में सामान्य रूप से व्यस्क स्त्री-पुरुष और उनकी सन्तानें सम्मिलित होती हैं। आधुनिक औद्योगिक समाज में नाभिकीय परिवार का चलन बढ़ा है। औद्योगिक समाज में गतिशीलता और रोजगार की आवश्यकता के कारण छोटे परिवारों की उपयोगिता में वृद्धि हुई, धीरे-धीरे यह चलन भारतीय सन्दर्भ में आवश्यकता के रूप में अधिक मजबूत दिखाई पड़ता है।

भारतीय समाज में परिवार का पारम्परिक स्वरूप संयुक्त परिवार व्यवस्था पर आधारित रहा है। जिसमें माता-पिता, दादा-दादी, चाचा-चाची, भाई-बहन एवं उनके बच्चे निवास करते थे। परिवार आर्थिक उत्पादन, उपभोग, सामाजिक-आर्थिक सुरक्षा और संस्कारों का महत्वपूर्ण केन्द्र रहा है। संयुक्त

- शोधार्थिनी—समाजशास्त्र, लखनऊ, विश्वविद्यालय, लखनऊ
- शोध पर्यवेक्षक : एसो0 प्रोफे0 समाजशास्त्र, महाराजा बिजली पासी पी0जी0कालेज, आशियाना लखनऊ।

परिवार में सामूहिकता, त्याग, सहयोग आज्ञाकारिता, पारिवारिक प्रतिष्ठा और सामाजिक उत्तरदायित्व जैसे मूल्यों का महत्व रहा है। परिवार का मुखिया निर्णय की भूमिका में होता था। विवाह, शिक्षा, व्यवसाय, व्यापार, सम्पत्ति एवं सामाजिक सम्बन्धों से निर्णय में परिवार की सामूहिक भूमिका होती थी।

संयुक्त परिवार व्यवस्था पूरी तरह आदर्शवाद एवं संघर्षरहित जीवन पर आधारित नहीं था, इसमें पीढ़ियों के बीच मतभेद एवं सम्पत्ति सम्बन्धी विवाद के साथ-साथ व्यक्तिगत स्वतंत्रता एवं लैंगिक असमानताएँ भी विद्यमान थीं। अतः एकाकी परिवारों का विस्तार मात्र पारम्परिक संरचना में विघटन के रूप में नहीं बल्कि सामाजिक सम्बन्धों के नये ताने-बाने के रूप में परिलक्षित होता है। भारत में एकाकी परिवारों का विकास एकाएक नहीं बल्कि निरन्तर सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक प्रक्रियाओं की गतिशीलता के साथ दृष्टिगत होती है। टालकाट पारसन्स (1955) ने आधुनिक औद्योगिक समाज में नाभिकीय परिवार की उपयोगिता पर बल दिया है। औद्योगीकरण ने जहाँ रोजगार के अवसर पैदा किये वहीं कृषि की प्राथमिकता को कमजोर भी किया उद्योगों, कारखानों एवं सेवा क्षेत्र में रोजगार को प्राप्त करने हेतु लोगों को मूल स्थान छोड़कर नगरों की ओर पलायन करना रोजगार की गतिशीलता और एकाकी परिवारों के विकास में वृद्धि को दर्शाता है।

औद्योगीकरण के परिणाम स्वरूप नगरीकरण में तीव्रगति से वृद्धि हुई, जिसने एकाकी परिवार को आकर्षित किया। रोजगार की व्यस्तता, आवास की कमी और नगरीय जीवन के आकर्षण और आवश्यकता ने भी एकाकी परिवारों के प्रचलन में वृद्धि की। वहीं शिक्षा की भूमिका ने चिंतन एवं आकांक्षाओं के कारण जीवन-निर्णय को प्रभावित किया है। महिलाओं की शिक्षा तथा रोजगार में बढ़ती भागीदारी ने पारिवारिक भूमिका में बदलाव किया है। आर्थिक रूप से सक्रिय महिलाएँ पारिवारिक निर्णय में भागीदारी के प्रति अधिक सशक्त दिखाई पड़ती हैं।

आधुनिक समाज में व्यक्तिगत स्वतंत्रता, आत्म निर्णय एवं निजी जीवन में भी वृद्धि देखी जा सकती है। आज का युवा अपनी पसन्द और जीवन-शैली के प्रति स्पष्ट है जिससे छोटे पारिवारिक सम्पर्क को सम्भव बनाया है। जिससे परिवार का सदस्य भौगोलिक रूप से दूर होते हुए भी आर्थिक एवं भावात्मक रूप से जुड़ा है।

समकालीन भारतीय समाज में एकाकी परिवार के आकार संरचना और सम्बन्धों का छोटा होना स्वाभाविक था, किन्तु उसकी भूमिका और अधिकारों में भी परिवर्तन स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है। देसाई (1964) परम्परागत परिवार में पति को प्रमुख निर्णयकर्ता तथा पत्नी को घरेलू भूमिका में देखते हैं। आधुनिक एकल परिवार में 'पत्नी-पत्नी के सम्बन्धों में साझेदारी पनपी है। शाह (1998) आर्थिक निर्णय, बच्चों की शिक्षा, आवास, निवेश और सामाजिक गतिविधियों में पति-पत्नी की भागीदारी में भी वृद्धि हुई है। वही अनेक परिवारों में महिलाओं पर घरेलू कार्यों का अतिरिक्त बोझ भी बढ़ा है। इसलिए समानता की ओर परिवर्तन के साथ-साथ लैंगिक भूमिकाओं में तनाव भी बढ़ा है।

एकाकी परिवार में बच्चों की संख्या सामान्तः कम होती है। माता-पिता बच्चों की शिक्षा, स्वास्थ्य, मनोरंजन के साथ-साथ नौकरी एवं व्यवसाय पर अधिक संसाधन खर्च करते हैं। बच्चों की इच्छा और मनः स्थिति को अधिक महत्व दिया जाने लगा है। दूसरी ओर छोटे परिवारों में बच्चों का समाजीकरण सीमित हो जाता है। दादा-दादी, चाचा-चाची तथा अन्य नातेदारों के साथ नियमित

सम्पर्क का अभाव देखा जा सकता है। एकाकी परिवारों के विस्तार का सर्वाधिक प्रभाव वृद्धि पर होता है। संयुक्त परिवार में वृद्धों की सामाजिक भूमिका महत्वपूर्ण होने के कारण सशक्त दिखाई पड़ती हैं जबकि एकाकी परिवार में वृद्धों की स्थिति दयनीय दिखाई पड़ती हैं। लोग अपने वृद्ध माँ-बाप की सामाजिक-पारिवारिक पहचान को छुपाने का प्रयास करते हैं जो उनके अस्तित्व पर संकट है। इसे केवल पारिवारिक विघटन की दृष्टि से नहीं देखा जा सकता है। श्रीनिवास (1987) ने आधुनिक संचार और आर्थिक सहयोग के कारण दूर रहते हुए भी संतानों द्वारा वृद्ध माता-पिता की सहायता सम्भव कर दिया है। इसलिए वृद्ध माता-पिता की देखभाल का स्वरूप प्रत्यक्ष सहवास से परिवर्तित होकर कभी-कभी आर्थिक और संचार-तंत्रीय सहयोग में परिवर्तित हो रहा है।

परम्परागत परिवारों में जहाँ आय और सम्पत्ति का सामूहिक उपयोग होता था, वहीं एकाकी परिवार में आय, व्यय, बचत एवं निवेश का निर्णय अब पति-पत्नी के अधिकार क्षेत्र में है। अधिक वाले परिवारों की आर्थिक स्वतंत्रता एवं उपयोग की क्षमता भी अधिक होती है। शिक्षा, आवास, स्वास्थ्य जैसी सुविधाओं में भी वह आगे होते हैं। महिलाएँ अब घरेलू कार्यों तक सीमित न होकर समाज के प्रत्येक क्षेत्र यथा-शिक्षा, प्रशासन, व्यवसाय, राजनीति, सेवा जैसे-क्षेत्र में सक्रिय भूमिका निभा रही हैं। किन्तु एकाकी परिवार महिलाओं के लिए मात्र स्वतंत्रता का माध्यम नहीं हैं। संयुक्त परिवार में घरेलू कार्य कई सदस्यों में बंटे होते हैं, जबकि एकाकी परिवार में सम्पूर्ण कार्य का दायित्व पति-पत्नी पर होता है। कार्यशील महिलाओं के लिए घरेलू कार्यों के साथ नौकरी या व्यवसाय में संतुलन स्थापित करना कठिन हो जाता है।

बच्चों के समाजीकरण में परिवार की भूमिका हमेशा महत्वपूर्ण रही है। बच्चों के व्यक्तित्व निर्माण में माता-पिता की भूमिका बड़ी है। आज के आधुनिक परिवेश में डिजिटल तकनीक एवं सोशलमीडिया के प्रभाव ने समाजीकरण की प्रक्रिया को जटिल बनाया है। पड़ोस, नातेदार एवं स्थानीय समुदाय की भूमिका अब इण्टरनेट, टी0वी0, मोबाइल ने ले लिया है जो बच्चों के व्यवहार एवं मूल्यों को प्रभावित कर रहा है। आज परम्परागत परिवार की भावना 'हम' अस्तित्व विहीन हो गई है। उसका स्थान 'मैं' और 'मेरा' ने ले लिया है। आज इसमें संतुलन बनाने की आवश्यकता है।

वर्तमान आधुनिक परिवेश में एकाकी परिवार के कुछ सकारात्मक पक्ष भी हैं जैसे-पति-पत्नी को अधिक स्वतंत्रता, पारिवारिक निर्णय में शीघ्रता, बच्चों की शिक्षा एवं विकास पर दृष्टि, महिलाओं की निर्णय प्रक्रिया में बढ़ती भागीदारी, निजता के महत्व में वृद्धि, रोजगार में गतिशीलता, व्यक्तिगत आकांक्षा एवं व्यवसाय के अनुरूप जीवन-शैली का निर्माण इत्यादि हैं जबकि एकाकी परिवार में चुनौतियाँ भी बढ़ी हैं जैसे-एकाकीपन, का संकट, तनाव तथा भावनात्मक संवाद में कमी के साथ बच्चों के देखभाल की समस्या, आर्थिक दबाव, वैवाहिक तनाव, सामाजिक नियंत्रण में कमी तथा वृद्धों की समस्या बढ़ी है।

भारतीय समाज में एकाकी परिवार में वृद्धि निरन्तर दिखाई पड़ रहा है, लेकिन संयुक्त परिवार का अस्तित्व संकट में अवश्य है किन्तु पूरी तरह समाप्त नहीं हुआ है। छोटे कस्बे एवं नगरों में मिश्रित परिवार प्रणाली भी विकसित हो रहे हैं। रोजगार, नौकरी, भोजन अलग-अलग लेकिन निवास एक है, अन्दर एकाकी व्यवस्था किन्तु घर के बाहर से संयुक्त परिवार का आभाष मिलता है। परिवार समाप्त नहीं हो रहा है। बल्कि उसके कार्य, संरचना एवं सम्बन्धों का इसे पुनर्गठन कहा जा सकता है।

परिवार की मूल आवश्यकता, भावनात्मक जुड़ाव, समाजीकरण, सहयोग, प्रजनन एवं सामाजिक पहचान आज भी स्थापित है।

एकल परिवार आधुनिक भारतीय समाज में सामाजिक परिवर्तन की महत्वपूर्ण अभिव्यक्ति कही जा सकती है। परिवर्तन का पक्ष अगर देखा जाय तो औद्योगीकरण, नगरीकरण, शिक्षा, महिला सशक्तिकरण, व्यक्तिवाद, आर्थिक परिवर्तन एवं तकनीकी विकास ने अवश्य ही परिवार का स्वरूप प्रभावित किया है। एकाकी परिवार ने व्यक्ति को अधिक स्वतंत्रता, निजता और निर्णय का अवसर प्रदान किया है। लेकिन इसके साथ भावनात्मक एकाकीपन, बच्चों की देखभाल, वृद्धों की प्रस्थिति एवं आर्थिक दबाव ने वैवाहिक तनाव जैसी चुनौतियाँ भी हैं।

समकालीन भारतीय परिवार का भविष्य कही न कही आने वाले समय में मिश्रित स्वरूप की ओर बढ़ेगा, जिसमें एकल परिवार की संरचना और संयुक्त परिवार का भावनात्मक-आर्थिक सम्बन्धों का जोड़ दिखाई पड़ सकता है। संचार-साधनों, प्रवास एवं परिवर्तित जीवन शैली का प्रभाव परिवार भौगोलिक सीमाओं को अवश्य कमजोर किया है। इसलिए आज परिवार का एकत्र रहना नहीं बल्कि निरन्तर परिवर्तित सामाजिक सम्बन्धों के जाल को समझना अत्यन्त आवश्यक है।

इस प्रकार एकल परिवार के बदलते स्वरूप को हम मात्र परिवार संस्था में हो रहे परिवर्तन के रूप में नहीं बल्कि भारतीय समाज में हो रहे व्यापक सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक एवं लौंगिक परिवर्तन को समझने का महत्वपूर्ण आधार भी है।

#### संदर्भ सूची –

1. मर्डाक, जी0पी0; सोशल स्ट्रक्चर, द मैकमिलन कम्पनी न्यूयार्क-1949
2. टालकॉट, पारससन्स एण्ड, आर0एफ0 वेल्स ; फैमिली सोशियोलाइजेशन एण्ड इन्ट्रक्शन प्रोसेस, द फ्री प्रेस ग्लैंको इलियंस-1955
3. शाह एम0ए0 ; द फैमिली इन इण्डिया : क्रिटिकल एस्सेज, ओरियण्ट लॉगमैन, न्यू डेलही-1998
4. श्री निवास, एम0एन, ; आधुनिक भारत में सामाजिक परिवर्तन, नई दिल्ली-1987
5. कपाडिया, के0एम0 मैरिज एण्ड फैमिली इन इण्डिया, आक्सफोर्ड युनिवर्सिटी प्रेम बाम्बे-1966
6. आहूजा राम ; भारतीय सामाजिक व्यवस्था, रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर-1997
7. शर्मा गोविन्द प्रसाद ; शिक्षा और समाज, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास भारत, नई दिल्ली-2022